वकील और कानूनी शिक्षा
Lawyers and Legal Education

माधव खोसला
Madhav Khosla
July 16, 2012

अभी हाल ही में बार काउंसिल ऑफ़ इंडिया वकालत करने के लिए अपेक्षित योग्यताओं के विवाद में उलझ गई है. कानून के छात्रों के विरोध के बावजूद काउंसिल ने कानून के स्नातकों के लिए बार में प्रवेश पाने के लिए एक परीक्षा की शुरूआत कर दी है. अधिवक्ता अधिनियम,1961 की सख्त रीडिंग के अनुसार अनिश्चित कानूनी स्थिति के होते हुए भी यह उपाय काफ़ी महत्वाकांक्षी थाः विधिक स्कूल मोटे तौर पर छात्रों के इनपुट को विनियमित करने पर ज़ोर देते थे ताकि गुणवत्ता को सुनिश्चित किया जा सके. इस परिवर्तन का उद्देश्य नतीज़ों को जाँचना भी था. यदि इसे अच्छी तरह से किया जाए तो इससे दोनों ही स्तरों पर गुणवत्ता में सुधार होगा, वकीलों और विधिक शिक्षा की गुणवत्ता में. अब कुछ ही महीनों में बार काउंसिल को लेकर एक नया विवाद पैदा हो गया है, जिससे भारत में विधिक शिक्षा पर जबर्दस्त प्रभाव पड़ने का खतरा मंडराने लगा है.

यह विवाद उच्च शिक्षा व अनुसंधान विधेयक, 2011 के कानून को लेकर है, जिसका उद्देश्य उच्च शिक्षा व अनुसंधान के राष्ट्रीय आयोग की स्थापना करना है. प्रस्तावित आयोग का एक उद्देश्य यह भी है कि ‘‘यह आयोग उच्च शिक्षा और अनुसंधान के संवर्धन और समन्वय के लिए यथोचित कदम उठाएगा’’ और ‘‘उच्च शिक्षा और अनुसंधान के मानक निर्धारित, समन्वित और निर्दिष्ट करने के लिए आवश्यक विनियमों का निर्माण करेगा.’’ जैसा कि विधेयक की धारा16(2) and 17(2) में पुष्टि की गई है, इसमें उठाए गए कदम और विनियम काफ़ी व्यापक होंगे और इन्हें लागू करने के लिए आयोग के पास व्यापक शक्तियाँ होंगी. उच्च शिक्षा में ऐसे सर्वग्रासी विनियामक निकाय की आवश्यकता अपने-आप में ही एक बहुत बड़ा और जटिल प्रश्न है और जिसको लेकर टिप्पणियाँ की जाने लगी हैं. निश्चय ही बार काउंसिल की चिंता उच्च शिक्षा को लेकर आम भावनाएँ ही नहीं हैं, जिनके कारण विधेयक की आवश्यकता पड़ी है, बल्कि विधिक शिक्षा में इसकी दखलंदाज़ी है.

इस समय विधिक शिक्षा बार काउंसिल की ज़िम्मेदारी है और अधिवक्ता अधिनियम, की धारा 7 निकाय को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह ‘‘विधिक शिक्षा का संवर्धन करे’’ और इसके मानकों को विनियमित करे. काउंसिल के अनुसार इस विधेयक के पारित होने के बाद उसकी यह शक्ति छिन जाएगी और यह अधिवक्ता अधिनियम के विरुद्ध होगा. यहाँ जो मुद्दा है वह कानूनी नहीं है- संसद कोई भी ऐसा कानून पारित कर सकती है जो पिछले कानून के विरुद्ध हो; बल्कि निरसन (रिपील) के इस सिद्धांत से विनियामक व्यवस्था में परिवर्तन आएगा. 11 और 12 जून को लगभग 1.7 मिलियन वकील इस विधेयक के विरोध में हड़ताल पर चले गए और मई में मानव संसाधन विकास की स्थायी संसदीय समिति को दिए गए अपने ज्ञापन में बार काउंसिल ने अनेक आरोप लगाते हुए कहा कि यह विधेयक संघीय ढाँचे, लोकतंत्र और व्यावसायिक स्वायत्तता का उल्लंघन करता है.

बयान के अतिशयोक्तिपूर्ण होते हुए भी बार काउंसिल ने राष्ट्रीय विधिक स्कूल भारतीय विश्वविद्यालय,बैंगलोर और पाँच-वर्षीय बी.ए.,एल.एल. बी की दोहरी डिग्री के मॉडल की सफलता पर ज़ोर देकर सही किया है. हमारे पास इस समय ऐसे पंद्रह स्कूल हैं और पूरे उत्साह से उनके बढ़ते रहने का खतरा है. लेकिन हमें यह मानना चाहिए कि विधिक स्कूलों की बढ़ोतरी बार काउंसिल के विधिक शिक्षा से संबंधित प्रभावी विनियमन के अनुरूप नहीं है. वस्तुतः ऐसा लगता है कि ऐसे स्कूलों की बढ़ोतरी संकाय की गुणवत्ता या विधिक शिक्षा के शैक्षिक उद्देश्यों के अन्य लक्ष्यों जैसे संस्थागत मामलों को प्रभावित किए बिना ही हो रही है. यह भावना बढ़ती जा रही है कि ऐसी संस्थाओं का संख्या अपने छात्रों की तादाद के साथ ही बढ़ती जा रही है और यहाँ तक कि बुनियादी ढाँचे में भी कोई बुनियादी परिवर्तन होता है तो वह भी छात्रों के आंदोलन के कारण ही होता है. इतना ही नहीं, यदि फ़ूड चेन में भी कमी आती है तो भी यह स्पष्ट है कि तेज़ी से फलती-फूलती ये संस्थाएँ उनके अनुरूप नहीं चलतीं.

यद्यपि कानून की डिग्री अब प्रतिष्ठित कारोबार हो गया है और अग्रणी विधिक स्कूलों से निकलने वाले छात्रों को आकर्षक रोज़गार के अवसर मिलने लगे हैं. फिर भी विधिक शिक्षा के उद्देश्यों पर कम ही चर्चा की जाती है. उम्मीद है ऐसे विधिक स्कूलों से बार की गुणवत्ता में सुधार होगा. लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि बहुत कम छात्र बिना किसी खास कारण के वकालत का पेशा अपनाने वाले वकील बनते हैं. इससे अधिक गंभीर बात तो यह है कि शायद विधिक शिक्षा की संस्कृति निर्मित करने का कोई खास प्रयास नहीं किया गया जो वास्तविक अनुसंधान के ऐसे नतीज़ों को बढ़ावा देती हो जो कानूनी परिवर्तन को समझते हों और आकार भी देते हों. एलएल.बी पाठ्यक्रम के लिए प्रतिष्ठित और प्रामाणिक लॉ जर्नल की बात तो छोड़ दें, जिनसे छात्रों, विद्वानों, वकीलों और न्यायाधीशों के बीच संवाद हो सके, कानून के प्रत्येक क्षेत्र में अच्छे स्तर की बुनियादी छात्रोपयोगी पुस्तकें भी नहीं हैं.

क्या यह विधेयक कोई बेहतर समाधान दे सकता है? यद्यपि इसमें समस्या को समझने का प्रयास तो किया गया है, लेकिन इससे बेहतर समाधान नहीं मिल पाता. कोई भी विनियामक विकल्प बेहतर प्राथमिकता नहीं है. हमारे पास कल्पना के पंख तो हैं, लेकिन विकल्प बहुत कम हैं. ज़िम्मेदारी की हमारी वर्तमान समस्या ऐसी है जिसमें प्रस्तावित मॉडल के कामयाब होने की कम ही संभावना है. बार काउंसिल ने बहुत ही महत्वपूर्ण और वैध दावा किया हैः विधेयक में प्रस्तावित विनियामक निकाय जैसी संस्था का ट्रैक रिकॉर्ड फीका रहा है. डॉक्टरल और मास्टर डिग्री (पीएच डी और एलएल.एम) के स्तर की विधिक शिक्षा राज्य के कार्यक्षेत्र में आती है, बार काउंसिल के कार्यक्षेत्र में नहीं और यह विधिक शिक्षा का क्षेत्र ही है, जो सबसे अधिक उपेक्षित है. इससे अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि राज्य के एकमात्र क्षेत्र में आने वाले शिक्षा के अन्य विषयों की दुर्दशा भी इसी वास्तविक ट्रैजेडी की ही पुष्टि करती है.

बहुत कम लोग ऐसे हैं जो ईमानदारी से इस बात से इंकार कर सकते हैं कि बार काउंसिल एक कमज़ोर स्वतःविनियामक संस्था रही है.कितने ऐसे वकील हैं जो गलत आचरण के कारण कभी मुश्किल में फँसे हैं? कोई इस बात से भी इंकार नहीं कर सकता कि भारत के सबसे अच्छे स्कूलों में भी संकाय से लेकर बुनियादी ढाँचे तक गंभीर और बुनियादी संस्थागत चुनौतियाँ हैं. बार काउंसिल ने बहुत उत्साह के साथ इन चुनौतियों का सामना नहीं किया है और यह स्थायी समिति को प्रस्तुत उसके ज्ञापन में भी नहीं झलकता है. लेकिन यह भी सच है कि इन बातों के इर्द-गिर्द चिंता और ध्यान बढ़ता जा रहा है और एक समय आएगा जब इन संस्थाओं

से निकले छात्र ही इन समस्याओं को सुलझाने में कहीं बड़ी भूमिका अदा करेंगे और बार परीक्षाओँ जैसे उपाय इस दिशा में भावी संकेत हैं. वर्तमान विधेयक इस धीमी गति से चलती गाड़ी को पटरी से ही उतार देगा. इस विधेयक में तमाम शक्तियाँ सरकार द्वारा नामित सदस्यों में निहित होंगी और इसमें भी वही समस्याएँ आ जाएँगी जो एक लंबे समय से भारत की उच्च शिक्षा के राज्य-विनियमन में होती हैं. हमारी तमाम वर्तमान समस्याओं के बावजूद इनका समाधान सरकार द्वारा नामित सदस्यता में नहीं हो सकता. निश्चय ही बार काउंसिल ने इमारतें तो खड़ी कर ली हैं, लेकिन अब समय आ गया है जब हम उनके अंदर उपजने वाले विचारों पर गौर करें और उन्हें पुष्पित और पल्लवित करें.

माधव खोसला हार्वर्ड विश्वविद्यालय में पीएच डी के छात्र हैं. उनकी पहली पुस्तक, भारतीय संविधान (ऑक्सफ़ोर्ड इंडिया लघु परिचय), पतझड़, 2012 *में प्रकाशित होगी. ईमेल: madhav.khosla@aya.yale.edu.*

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार
<malhotravk@hotmail.com>